अथ क्र्यादयः।

डुक्रीञ् द्रव्यविनिमये 1

व्याख्याः अनिट्। ड्वित्। ञित् उभयपदी।

क्र्यादिभ्यः श्ना 3. 1. 81

क्रीणाति। ई हल्यघोः—क्रीणीतः। श्याभ्यस्तयोरातः—क्रीणन्ति। क्रीणासि, क्रीणीथः, क्रीणीथ। क्रीणामि, क्रीणीवः, क्रीणीमः। क्रीणीते, क्रीणीते, क्रीणते। क्रीणीषे, क्रीणाथे, क्रीणीध्वे। क्रीणे, क्रीणीवहे, क्रीणीमहे।

चिक्राय, चिक्रियतुः, चिक्रियुः। चिक्रेथ, चिक्रयिथ। चिक्रिये। क्रेता। क्रेष्यति, क्रेष्यते। क्रीणातु, क्रीणीतात्। क्रीणीताम्। अक्रीणात्, अक्रीणीत। क्रीणीयात्, क्रीणीत। क्रीयात्, क्रेषीष्ट। अक्रैषीत्, अक्रेष्ट। अक्रेष्यत्, अक्रेष्यत।

व्याख्याः क्री आदि धातुओं से श्ना प्रत्यय हो।

शप इति—श्ना शप् का अपवाद है। शकार इसका इत् है।

क्रीणाति—लट् परस्मै० प्र० पु० ए. व. में श्ना विकरण हुआ। तब णत्व होकर रूप सिद्ध हुआ।

क्रीणीतः—लट् तस् में श्ना के आकार को 'ई हल्यघोः' सूत्र से ईकार होकर रूप बना।

क्रीणन्ति—लट् अन्ति में श्ना के आकार को 'श्नाभ्यस्तयोरातः' इस सूत्र से लोप होने पर रूप सिद्ध हुआ।

क्रीणीथः, क्रीणीथ, क्रीणीवः, क्रणीमः—थस्, थ, वस्, मस् के अपित् सार्वधातुक होने से ङिद्वत् हो जाने के कारण 'ई हल्यघोः' से श्ना के आकार को ईकार हुआ।

क्रीणीत—लट् आ० प० प्र० पु० ए. व. त के अपित् सार्वधातुक होने से ङिद्वत् हो जाने के कारण 'ई हल्यघोः' से श्ना के आकार को ईकार होकर रूप बना। आत्मनेपद के सभी हलादि प्रत्ययों में इसी प्रकार आकार को ईकार होता है।

क्रीणाते—लट् आ० प० प्र० पु० द्वि. व. आताम् में अजादि प्रत्यय परे होने से 'श्नाभ्यस्तयोरातः' से आकार का लोप होकर रूप बना।

क्रीणते—लट् आ० प० प्र० पु० बहु० में झ को 'अत्' आदेश और टि को एकार होने पर आकार का लोप होकर रूप सिद्ध हुआ।

इसी प्रकार अजादि प्रत्यय पर रहते श्ना के आकार का लोप अन्यत्र भी होता है।

चिक्राय—लट् परस्मै० प्र० पु० ए. व. णल् में द्वित्व, अभ्यासकार्य और अभ्यास के उत्तरखण्ड के ईकार को 'अचो ञ्णिति' से वद्धि ऐ और आय् आदेश होकर रूप सिद्ध हुआ।

चिक्रियतुः—लिट् परस्मै० प्र० पु० द्विवचन अतुस् के धातु के अन्त्य ईकार से कित होने के कारण 'असंयोगात् लिट् कित् से कित् होने से गुण का निषेध हो जाता है। तब 'अचि श्नु—धातुभ्रुवां य्वोरियुङुवङौ' से 'ई'कार को इयङ् आदेश होकर रूप बना।

इसी प्रकार चिक्रियुः तथा चिक्रिये, चिक्रियाते—इन आत्मनेपद के रूपों में भी इयङ् होता है।

क्रीणीतात्—लोट् में तातङ् के ङित् होने से श्ना के आकार को 'ई हल्यघोः' से ईकार हो गया।

लोट के रूप परस्मै०—क्रीणातु, क्रीणीताम्, क्रीणन्तु। क्रीणीहि, क्रीणीतम्, क्रीणीत। क्रीणानि, क्रीणाव, क्रीणाम। आ०

प०—क्रीणीताम्, क्रीणाताम्, क्रीणताम्। क्रीणीष्व, क्रीणीथाम्, क्रीणीध्वम्। क्रीणै, क्रीणावहै, क्रीणामहै।

लङ परस्मै०—अक्रीणात्, अक्रीणीताम्, अक्रीणन्। अक्रीणाः, अक्रीणीतम्, अक्रीणीत। अक्रीणाम्, अक्रीणीव, अक्रीणीम। आ० प० अक्रीणीत, अक्रीणाताम्, अक्रीणत। अक्रीणीथाः, अक्रीणाथाम्, अक्रीणीध्वम। अक्रीणे, अक्रीणीवहि, अक्रीणीमहि।

विधिलिङ् परस्मै०—क्रीणीयात्, क्रीणीयाताम्, क्रीणीयुः। क्रीणीयाः, क्रीणीयातम्, क्रीणीयात। क्रीणीयाम्, क्रीणीयाव, क्रीणीयाम। आ० प० क्रीणीत, क्रीणीयाताम्, क्रीणीरन्। क्रीणीथाः, क्रीणीयाथाम्, क्रीणीध्वम्। क्रीणीय, क्रीणीवहि, क्रीणीमहि।

यहाँ आ० प० में 'ई' सीयुट् का है और 'श्ना' के आकार का 'श्नाभ्यस्तयोरातः' सूत्र से लोप हुआ है। परस्मै० में यासुट् के ङित् होने से श्ना के आकार को 'ई हल्यघोः' से ईकार हुआ।

अक्रैषीत्—लुङ् परस्मै० प्र० पु० ए० व में अट्, च्लि, तिप्, उसके इकार का लोप, च्लि को सिच्, इट्, इगन्त–अङ्–लक्षणा वद्धि होने पर सकार को मूर्धन्य षकार होकर रूप सिद्ध हुआ।

शेष रूप—अक्रैष्टाम्, अक्रैषुः। अक्रैषीः, अक्रैष्टम्, अक्रैष्ट। अक्रैषम्, अक्रैष्व, अक्रैष्म।

'वि' पूर्वक क्री धातु का अर्थ बेचना होता है और तब '३७ परि–व्यवेभ्यः क्रियः १। ३। १७।।' इस सूत्र से धातु आत्मनेपदी होती है।

विक्रीणीते—बेचता है।

प्रीञ् तर्पणे कान्तौ च 2

प्रीणाति, प्रीणीते।

व्याख्याः अनिट्। ञित् उभयपदी। इसके रूप 'क्री' के समान ही बनते हैं।

श्रीञ् पाके 3

व्याख्याः अनिट्। ञित् उभयपदी। इसके रूप में भी 'क्री' के समान ही बनते हैं।

श्रीणाति. श्रीणीते. मीञ् हिंसायाम् 4

व्याख्याः अनिट्। ञित् उभयपदी।

हिनु-मीना 8. 4. 15

उपसर्गस्थात् निमित्तात् परस्यतयोर्नस्य णः स्यात्। प्रमीणाति, प्रमीणीते। मीनाति इत्यात्वम्-ममौ। मिम्यतुः। ममिथ, ममाथ। मिम्ये। माता। मास्यति। मीयात्। मासीष्ट। अमासीत्, अमासिष्टाम्। अमास्त।

व्याख्याः उपसर्ग में स्थित निमित्त से पर हि और मी धातु के नकार को णकार होता है।

प्रमीणाति, प्रमीणीते—यहाँ उपसर्ग में स्थित निमित्त रेफ से पर 'मी' धातु के नकार को णकार 'हिनुमीना' इस सूत्र से हुआ।

ममौ—लिट् प्र० पु० ए० व० णल् में 'मीनाति'—इस से ईकार को आत्व हुआ। तब 'आत औ णलः' इस सूत्र से णल् को 'औ' होता है। द्वित्व और अभ्यासकार्य तथा वद्धि होकर रूप सिद्ध हुआ।

मिम्यतुः—लिट् प्र० पु० द्वि० व० अतुस् में द्वित्व और अभ्यासकार्य हाने पर यण् आदेश होकर रूप बना।

'मीनाति–' इत्यादि सूत्र तिप्–सिप्–मिप् गुणवद्धियोग्य में ही प्रवत्त होता है, इसलिए 'अतुस' में आत्व नहीं होता।

ममिथ, ममाथ—लिट् म. पु. ए. व. थल् में 'मीनाति–मिनोति–' इत्यादि सूत्र से आत्व होकर द्वित्व और अभ्यासकार्य होने पर तास् में नित्य अनिट् होते हुए अजन्त होने के कारण भारद्वाज नियम से इट् विकल्प से हुआ। इट् पक्ष में आतो लोप इटि च' इस सूत्र से आकार का लोप हुआ, इट् के अभाव में 'ममाथ' रूप बना।

मिम्ये—लिट् आ० प० प्र० ए. व. में द्वित्व और अभ्यासकार्य होने पर यण् आदेश होकर रूप सिद्ध हुआ।

अमासीत्—लङ् प्र० पु० ए. व. आत्व होने पर 'यमरमनमातां सक् च' इस सूत्र से इट् और सक् होने पर सिच् का लोप और दीर्घ होकर रूप सिद्ध हुआ।

शेष रूप—अमासिष्टाम्, अमासिषः। अमासीः, अमासिष्टम्, अमासिष्ट। अमासिषम्, अमासिष्व, अमासिष्म।

अमास्त—लुङ् आ० प० प्र० पु० ए. व. में अट्, च्लि और सिच् होने पर रूप सिद्ध हुआ।

शेष रूप—अमास्ताम्, अमासत। अमास्थाः, अमासाथाम्, अमाध्वम्। अमासि, अमास्वहि, अमास्महि।

षिञ् बन्धने 5

सिनाति, सिनीते। सिषाय, सिष्ये। सेता।

व्याख्याः अनिट्। षोपदेश। ञित् उभयपदी।

लुङ्—असैषीत्, असैष्टाम्, असैषुः। असैषीः, असैष्टम्, असैष्ट। असैषम्, असैष्व, असैष्म। आ०प०—असित, असिषताम्, असिषत, असिथाः, असिषाथाम्, असिढ्वम्। असिषि, असिष्वहि, असिष्महि।

स्कुञ् आप्लवने 6

व्याख्याः अनिट्। ञित् उभयपदी।

स्तन्भु-स्तुन्भु-स्कन्भु-स्कुन्भु-स्कुञ्भ्यः श्नुश्च 3. 1. 82

चात् श्ना। स्कुनोति, स्कुनाति। स्कुनुते, स्कुनीते। चुस्काव, चुस्कुवे। स्कोता। अस्कौषीत्। अस्कोष्ट। स्तन्भ्वादयश्चत्वारः सौत्राः। सर्वे रोधनार्थाः परस्मैपदिनः।

व्याख्याः स्तुन्भु, स्तुन्भु, स्कन्भु, स्कुन्भु और स्कुञ् धातुओं से श्नु विकरण होता है और श्ना भी।

इसलिए स्कुञ् के रूप स्वादि और क्रयादि दोनों के समान होंगे।

स्तन्भ्वादय इति—स्तुन्भु आदि चार धातुएँ सौत्र हैं अर्थात् इनका उल्लेख सूत्र में ही हुआ है धातु—पाठ में नहीं।

सर्वे इति—ये सब चारों धातु 'रोकना' अर्थवाली और परस्मैपदी हैं।

हलः श्नः शानज्झौ 3.1. 83

हलः परस्य श्नः 'शानच्' आदेशः स्याद् हौ परे। स्तभान।

व्याख्याः हल् से पर श्ना को 'शानच्' आदेश हो रि परे रहते।

शानच् का 'आन' शेष रहता है।

स्तभान—स्तन्भु सौत्र धातु के लोट् म० पु० ए. व. में विकरण श्ना होने पर नकार का लोप 'अनिदितां हल उपधायाः क्ङिति' सूत्र से हुआ। क्योंकि 'श्ना' अपित् सार्वधातुक होने से ङिद्वत् है। तब 'हल श्नः शानज्झौ' सूत्र से 'श्ना' को 'शानच्' होने पर 'अतो हेः' से 'हि' का लोप होकर रूप सिद्ध हुआ।

ज-स्तन्भु-म्रुचु-म्लुचु-ग्रुचु-ग्लुचु-ग्लुञ्चु-श्विभ्यश्च 3. 1. 58

च्लेरङ् वा स्यात्।

व्याख्याः ज, स्तन्भु, म्रुचु, म्लुचु, ग्रुचु, ग्लुचु, ग्लुचु और श्वि धातुओं से पर च्लि को अङ् आदेश विकल्प से हो।

स्तन्भेः 8. 3. 67

स्तम्भेः सौत्रस्य सस्य षः स्यात्। व्यष्टभत्, अस्तम्भीत्।

व्याख्याः उपसर्ग में स्थित निमित्त से पर सौत्र स्तन्भ् धातु के सकार को षकार हो।

व्यष्टभत—स्तम्भ्—धातु के लुङ् प्र० पु० ए. व. में 'च्लि' को 'जस्तन्भु—' सूत्र से अङ् आदेश हुआ। अङ् के ङित् होने

से उसके परे रहते धातु के नकार का लोप हो गया 'वि' उपसर्ग के योग में 'स्तन्भेः' सूत्र से सकार को मूर्धन्य षकार हुआ। तब ष्टुत्व होकर रूप बना।

अस्तभीत्—जब च्लि को अङ् नहीं हुआ तब सिच्, इट्, ईट्, और सिच् का लोप होकर रूप सिद्ध हुआ।

युञ् बन्धने 7

युनाति, युनीते। योता।

व्याख्याः अनिट्। ञित् उभयपदी।

लुङ्—अयौषीत्, अयौष्टाम्, अयोषुः इत्यादि।

क्नूञ् शब्दे 8

क्नूनाति, क्नूनीते। क्नविता।

व्याख्याः सेट्। ञित्, उभयपदी।

लिट्—चुक्राव। चुक्नुवे। लुङ्—अक्नावीत्, अक्नविष्ट।

दञ् हिसायाम् 9

दणाति, दणीते।

व्याख्याः अनिट्। ञित् उभयपदी।

लिट् ददार, ददरे। लुट्—दर्ता। लट्—दरिष्यति, दरिष्यते। लोट्—द्दणातु, द्दणीताम। लङ्—अद्दणात्, अद्दणीत। वि. लि. —द्दणीयात्, द्दणीत। आ. लि. द्रियात्, द्दषीष्ट। लुङ्—अदार्षीत, अद्दत।

द्रुञ् हिंसायाम् 10

द्रुणाति, द्रुणीते।

व्याख्याः सेट्। ञित् उभयपदी।

लिट्—दुद्राव, दुद्रु वे। लुट्=द्रविता। लट्—द्रविष्यति, द्रविष्यते। लुङ्—अद्रावीत्, अद्रविष्ट।

पूञ् पवने 11

व्याख्याः सेट्। ञित् उभयपदी।

प्वादीनां ह्रस्वः7. 3. 80

पूञ् लूञ् स्तञ् कञ् वञ् धूञ् ध प य भ म द ज झ ध न क ऋ ग ज्या री ली ब्ली प्लीनां चतुर्विं शतेः शिति ह्रस्वः। पुनाति, पुनीते। पविता।

व्याख्याः पूञ्, लूञ् (काटना), स्तञ् (ढकना), कञ् (हिंसा), वञ् (स्वीकार करना), धूञ् (कँपाना), श (हिंसा करना), प (पालन करना), भ (भरना), म (मरना), द (हिंसा करना), ज (जीर्ण होना), झ (जीर्ण होना), ध (धारण करना), न (नाश करना), क (हिंसा करना), ऋ (जाना), ग (निगलना), ज्या (बूढ़ा होना), री (हिंसा करना), ली (मिलना), ब्ली (स्वीकार) और प्ली (जाना) इन चौबीस धातुओं को ह्रस्व होता है, शित् प्रत्यय परे रहते।

पुनाति, पुनीते—लट् में श्ना के शित् होने से धातु के ऊकार को 'प्वादीनां ह्रस्वः' से ह्रस्व हुआ।

लुट्—पविता। लट्—पविष्यति। लङ्—अपुनात्, अपुनीत। वि० लि० पुनीयात्, पुनीत। आ० लि० पूयात्, पविषीष्ठ। लुङ्—आपावीत्, अपविष्ट।

लूञ् छेदने 12

लुनाति, लुनीते।

व्याख्याः सेट्। ञित् उभयपदी।

इसके रूप 'पूञ्' के समान ही बनते हैं।

स्तञ् आच्छादने 13

स्तणाति। शर्पूःर्वाः खयः-तस्तार, तस्तरतुः। तस्तरे। स्तरिता, स्तरीता। स्तणीयात्। स्तणीत। स्तीर्यात्।

व्याख्याः स्तञ् (ढक देना)। सेट्। ञित् उभयपदी।

तस्तार–लिट् के प्र० पु० ए० व० णल् में द्वित्व, बहु० अभ्यास–कार्य 'शर्पूर्वाः खयः' से अभ्यास में खर् तकार शेष रहता है सकार का लोप होता है। उत्तर खण्ड में 'ऋच्छत्यताम्' से गुणा और पुनः 'अत उपधायाः' से वद्धि हो कर रूप बनता है।

तस्तरतुः–अतुस् में द्वित्व, अभ्यासकर्ता होने पर 'ऋच्छत्यताम्' से अभ्यास के उत्तरखण्ड में गुण होकर रूप सिद्ध हुआ।

स्तरीता, स्तरिता–लुट् के प्र० पु० ए. व. में गुण होने पर वतो वा से इञ् का विलल्प से दीर्घ

स्तीर्यातः – कित् यासुट् के परे होने पर 'ऋत इद्धातोः' इस सूत्र से 'इर्' आदेश 'हलि च' इस सूत्र से इकार को दीर्घ होकर रूप सिद्ध हुआ।

लिङ्-सिचोरात्मनेपदेषु 7. 2. 42

वङ्-वभ्याम् ऋदन्ताच्च परयोर्लिङ्सिचोरिङ् वा स्यात् तङि।

व्याख्याः तङ् प्रत्यय परे रहते वङ्, वञ् और ऋदन्त धातुओं से परे लिङ् और सिच् को विकल्प से इट् हो।

न लिङि 7. 2. 39

वत इटो लिङि न दीर्घः। स्तरिषीष्ट। 'उश्च १। २। १२' इत्यनेन कित्त्वम्। स्तीर्षीष्ट। सिचि च परमैम्पदेषु-अस्तारीत्, अस्तारिष्टाम्, अस्तारिषुः। अस्तरिष्ट-अस्तरीष्ट, अस्तीर्ष्ट।

व्याख्याः वङ, वञ् और ऋदन्त धातुओं से पर इट् को दीर्घ न हो।

स्तरिषीष्ट–आ० लि० प० प्र० पु० ए. व. में सीयुट्, सुट् 'लिङसिचोः सूत्र से इट् विकल्प, ऋकार को गुण और दोनों सकारों को मूर्धन्य षकार होकर रूप सिद्ध हुआ।

स्तीर्षीष्ट–आ० लि० आ० प० प्र० ए० व० में इट् के अभावपक्ष में 'उश्च १। २। २२।।' सूत्र से सीयुट कित् हुआ। तब गुण का निषेध हो जाने से 'ऋत इद्धातोः' से ऋकार को 'इट्' आदेश और 'हलि च' से दीर्घ तथा षत्व होकर रूप बना।

अस्तारीत्–लुङ् परस्मै० प्र० पु० ए० व० में अट्, च्लि, सिच्, वद्धि, इट, ईट्, सिच्लोप होने पर 'वतो वा' सूत्र से इट् हो प्राप्त दीर्घ का 'सिचि च परस्मैपदेषु ७। २। ४०।।' से निषेध होकर रूप सिद्ध हुआ।

अस्तारिष्टाम्–लुङ् परस्मै० प्र० पु० द्वि० व० में पूर्ववत् सिद्धि होती है। 'वतो वा' से इट् को प्राप्त दीर्घ का 'सिचि च परस्मैपदेषु' से निषेध हो गया।

अस्तारिषुः–लुङ् परस्मै० प्र० पु० बहु० में पूर्ववत् सिद्धि होती है।

अस्तरीष्ट, अस्तरिष्ट, अस्तीर्ष्ट–लुङ् आ० प० प्र० पु० ए० व० में अट्, च्लि, सिच् होने पर 'लिङ्सिचोरात्मनेपदेषु' से इट् विकल्प से हुआ। तब ऋकार को अर् गुण तथा इट् को 'वतो वा' से दीर्घ विकल्प होकर पहले दो रूप बने। इट् के अभाव में 'उश्च' सूत्र से सिच् कित् हुआ। तब गुण का निषेध होने से 'ऋत इद्धातोः' से ऋकार को 'इर्' और 'हलि च' से दीर्घ होकर रूप बना। सिच् के सकार को मूर्धन्य षकार और तकार को ष्टुत्व टकार तीनों रूपों में होता है।

कञ् हिंसायाम् 14

कणाति, कणीते। चकार, चकरे।

व्याख्याः सेट्। ञित् उभयपदी। इसके रूप 'स्तञ्' के समान बनते हैं।

वञ् वरणे 15

वणाति वणीते। ववार, ववरे। वरीता, वरिता। 'उदोष्ठय-' इत्युत्वम्-वूर्यात्। वरिपीष्ट, वूर्षीष्ट। अवारीत्। अवारिष्टाम्। अवरीष्ट, अवरिष्ट, अवूर्ष्ट।

व्याख्याः सेट्। ञित् उभयपदी। इसके रूप भी प्रायः 'स्तञ्' के समान बनते हैं।

वूर्यात्—आ० लि० परस्मै० प्र० पु० ए० व० में यासुट् के कित् होने से 'उदोष्ठयापूर्वस्य' से ऋकार को उर् आदेश और 'हलि च' से उकार को दीर्घ होकर रूप सिद्ध हुआ।

वूर्षीष्ट—आ० लि० प्र० पु० ए० व० में सीयुट् सुट् होने के अनन्तर 'उश्च' सूत्र से सीयुट् कित् हो जाता है। तब 'उदोष्ठयपूर्वस्य' से ऋकार को उर् आदेश और 'हलि च' से दीर्घ होकर रूप सिद्ध हुआ।

यहाँ 'लिङ्सिचोरात्मनेपदेषु' सूत्र से इट् विकल्प से होता है। इट्पक्ष में 'वरिषीष्ट' रूप बनता है।

धूञ् कम्पने 16

धुनाति, धुनीते। धोता, धविता। अधावीत्, अधविष्ट, अधोष्ट।

व्याख्याः वेट्। 'स्वरतिसूतिसयतिधूञ्ऊदितो वा' सूत्र से इस धातु को इट् विकल्प से होता है। ञित्, उभयपदी।

धविता, धोता—लुट् प्र० पु० ए० व० में 'स्तुसुधूभ्यः परस्मैपदेषु' सूत्र से इट् नित्य होकर रूप बना।

ग्रह उपादाने 17

गृह्णाति, गृह्णीते। जग्राह, जगृहे।

व्याख्याः सेट्। स्वरितेत्, उभयपदी।

गृह्णाति—लट् परस्मै० प्र० पु० ए० व० में श्ना के अपित् सर्वधातुक होने से ङिद्वत् हो जाने के कारण 'ग्रहिज्या—' इत्यादि सूत्र से रेफ को ऋकार संप्रसारण होकर रूप सिद्ध हुआ।

शेष रूप—गृह्णीतः, गृह्णन्ति। गृह्णासि, गृह्णीथः, गृह्णीथ। गृह्णामि, गृह्णीवः, गृह्णीमः।

आ० प० गृह्णीते, गृह्णाते, गृह्णते। गृह्णीषे, गृह्णाथे, गृह्णीध्वे। गृह्णे, गृह्णीवहे, गृह्णीमहे।

लिट् परस्मै०—जग्राह, जगृहतुः, जगृहुः। आ० प०—जगृहे, जगृहाते, जगृहिरे।

ग्रहोलिटि दीर्घः 7. 2. 37

एकाचो ग्रहेर्विहितस्येटो दीर्घो न तु लिटि। ग्रहीता। गृह्णातु। हलः श्नः शानज्झौ-गृहाण। गृह्यात्। ग्रहीषीष्ट। ह्म्यन्तेति न वृद्धिः-अग्रहीत्। अग्रहीष्टाम्। अग्रहीष्ट, अग्रहीषाताम।

व्याख्याः एकाच् ग्रह धातु से विहित इट् को दीर्घ हो परन्तु लिट् परे रहते न हो।

ग्रहीता—लुट् प्र० पु० ए. व. में इट् को 'ग्रहोलिटि दीर्घः' सूत्र से दीर्घ होकर रूप बना।

लट्—ग्रहीष्यति, ग्रहीष्यते। लोट् परस्मै०—गृह्णातु, गृह्णीताम्, गृह्णन्तु। गृहाण, गृह्णीतम्, गृह्णीत। गृह्णानि, गृह्णाव, गृह्णाम। आ० प०—गृह्णीताम्, गृह्णाताम्, गृह्णताम्। गृह्णीष्व, गृह्णाथाम्, गृह्णीध्वम्। गृह्णै, गृह्णावहै, गृह्णामहै।

गृहाण—में 'हलः श्नः शानज्झौ' सूत्र से 'श्ना' को शानच् हुआ और तब अतो हेः' से हि का लुक्। णत्व होकर इस प्रकार रूप बना।

लङ्—अगृह्णात्, अगृह्णीत। वि० लि०—गृह्णीयात्, गृह्णीत।

गह्यात्—आ० लि० प्र० पु० ए. व. में यासुट् के कित् होने से 'ग्रहिज्या—' सूत्र से संप्रसारण होकर रूप बना।

ग्रहाषीष्ट—आ० लि० प्र० पु० ए. व. में सीयुट्, सुट् और इट् होने पर 'ग्रहोलिटि दीर्घः' से दीर्घ होकर रूप सिद्ध हुआ।

अग्रहीत्—लुङ् परस्मै० प्र० पु० ए. व. अट्, च्लि, सिच्, इट् 'ग्रहोलिटि दीर्घः' से दीर्घ हुआ। तिप् के इकार का लोप, उसे ईट्, सिच् का 'इट् ईटि' से लोप और सवर्णदीर्घ होकर रूप बन गया।

यहाँ अकार को हलन्तलक्षणा वद्धि प्राप्त थी, उसका 'नेटि' सूत्र से निषेध हुआ। पुनः 'अता हलादेर्लधोः' से विकल्प से वद्धि प्राप्त हुई। उसका 'ह्मयन्तक्षण—' इत्यादि सूत्र से निषेध हो गया।

शेष रूप—अग्रहीष्टाम्, अग्रहीषुः। अग्रहीः, अग्रहीष्टम्, अग्रहीष्ट। अग्रहीषम्, अग्रहीष्व, अग्रहीष्म। आ० प०—अग्रहीष्ट, अग्रहीषाताम्, अग्रहषित। अग्रहीष्ठाः, अग्रहीषाथाम्, अग्रहीढ्वम्। अग्रहीषि, अग्रहीष्वहि, अग्रहीष्महि।

लुङ्—अग्रहीष्यत्, अग्रहीष्यत।

कुष निष्कर्षे 18

कुष्णाति। कोषिता।

व्याख्याः सेट्। परस्मैपदी।

अश् भोजने 19

अश्नाति। आश। अशिता। अशिष्यति। अश्नातु। अशान।

व्याख्याः सेट्। परस्मैपदी।

लट्—अश्नाति, अश्नीतः, अश्नन्ति। अश्नासि, अश्नीथः, अश्नीथ। अश्नामि, अश्नीवः, अश्नीमः। लिट्—आश, आशतुः, आशुः।

अशान—लोट् म० पु० ए. व. में श्ना विकरण को 'हलः श्नः शानज्झौ' सूत्र से शानच हुआ। तब 'अतो हेः' सूत्र से 'हि' को लोप होकर रूप सिद्ध हुआ।

लोट्—अश्नातु, अश्नीताम्, अश्नन्तु। अशान, अश्नीतम्, अश्नीत अश्नानि, अश्नाव, अश्नाम।

लङ्—आश्नात्, अश्नीताम्, आश्वन्। आश्नाः, आश्नीतम्, आश्नीत। आश्नम्, आश्नीव, आश्नीम।

वि० लि०—अश्नायात्, अश्नीयाताम्, अश्नीयुः। अश्नीयाः, अश्नीयातम्, अश्नीयात। अश्नीयाम्, अश्नीयाव, अश्नीयाम्। आ० लि०—अश्यात्। लुङ्—आशीत, आशिष्टाम्, आशिषुः—इत्यादि—लङ्—आशिष्यत्।

मुष स्तेये 20

मोषिता। मुषाण।

व्याख्याः लट्। परस्मैपदी।

लट्—मुष्णाति। लिट्—मुमोष। लुट्—मोषिता। लट—मीषिष्यति। लाट—मुष्णातु। लङ्—अमुष्णत्। वि लि०—मुष्णीयात्। आ० लि०—मुष्यात्। लुङ्—अमोषीत्। लङ—अमोषिष्यत।

ज्ञा अवबोधने 21

जज्ञौ।

व्याख्याः अनिट। उभयपदी।

लट—जानाति, जानीतः, जानन्ति। जानासि, जानीथः, जानीथ। जानामि, जानीवः, जानीमः। आ० प० जानीत, जानाते, जानते। जनीषे, जानाथे, जानीध्वे। जाने, जानीवहे, जानीमहे।

ज्ञा धातु के स्थान में सार्वधातुक लकारों में 'जा' आदेश '६४२ ज्ञा—जनोर् जा ७। २। ७९' सूत्र से हो जाता है।

जज्ञौ–लिट् प्र० पु० ए. व. द्वित्व, अभ्यासकर्ता, णल् को 'औ' आदेश और वद्धि होकर रूप बना।

लुट्–ज्ञाता। लट्–ज्ञास्यति, ज्ञास्यते। लोट्–जानातु, जानीताम्, जानन्तु। जानीहि, जानीतम्, जानीत। जानानि, जानाव, जानाम। आ० प०–जानीताम्, जानाताम्, जानताम्। जानीस्व, जानाथाम्, जानीध्वम्। जानै, जानावहै, जानामहै।

वि० लि० परस्मै०–जानीयात्, जानीयाताम्, जानीयुः। जानीयाः, जानीयाताम्, जानीयात। जानीयाम्, जानीयाव, जानीयाम। आ० प०–जानीत, जानीयाताम्, जानीरन्। जानीथाः, जानीयाथाम्, जानीध्वम्। जानीय, जानीवहि, जानीमहि।

आ० लि० परस्मै०–ज्ञेयात्, ज्ञायात्। आ० प०–ज्ञासीष्ट।

लुङ् परस्मै०–अज्ञासीत्, अज्ञासिष्टाम्, आज्ञासिषुः। अज्ञासीः, अज्ञासिस्टम्, अज्ञासिष्ट। अज्ञासिषम्। अज्ञासिष्व, अज्ञासिष्म। आ० प०–अज्ञास्त, अज्ञासाताम्, अज्ञासत। लङ्–अज्ञास्यत्, अज्ञास्यत।

वङ् संभक्तौ 22

वणीते। ववषे, ववढ्वे। वरीता, वरिता। अवरीष्ट, अवरिष्ट, अवत। इति क्रयादयः।

व्याख्याः सेट्। ङित् आत्मनेपदी।

लट्–वणीते, वणाते, वणते। वणीषे, वणाथे, वणीध्वे। वणे, वणीवहे, वणीमहे।

ववषे, ववढ्वे–लिट् म० प० ए. व. में और बहुवचन ध्वम् में वलादि आर्धधातुक का 'कृसभव–' सूत्र में विशेष रूप से 'व' का उल्लेख होने से इट् का निषेध हो गया।

इस वङ् धातु के रूप में 'वञ् वरणे' के आत्मनेपद के रूपों के समान ही बनते हैं।

अवरीष्ट, अवरिष्ट, अवत–लुङ् प्र० पु० ए. व. में सिच् को 'लिङ्–सिचोरात्मनेपदेषु' सूत्र से इट् विकल्प से हुआ। इट को दीर्घ 'वतो वा' से विकल्प से हुआ। इट् के अभाव में 'ह्रस्वादङ्गात्' सूत्र से सिच् का लोप हुआ। इस प्रकार ये तीन रूप बने।

(क्रयादिगण समाप्त)